श्री कुशलवर्द्धनरचित

श्री विजयहीरसूरि स्वाध्याय

म. विनयसागर

स्फुट पत्र की साइज २५.८ x ११ है । कुल पंक्ति १४ है । प्रतिपंक्ति अक्षर लगभग ५३ हैं । लेखन १८वीं सदी है । पद्य २ का तीसरा चरण और पद्य ५ का प्रथम चरण काटा-पीटा के कारण अस्पष्ट आ हो गया है । प्रारम्भ में अज्ञात कर्ता कृत महावीर तप स्वाध्याय है ।

रचनाकार कुशलवर्द्धन है । 'पभणइ तेहनू सीस' शब्द से कुशलवर्द्धन का शिष्य प्रकट होता है अथवा कुशलवर्द्धन हीरविजयसूरि का शिष्य है । कुशलवर्द्धन के सम्बन्ध में कोई ज्ञातव्य जानकारी नहीं है ।

इस हीरविजयसूरि स्वाध्याय में आचार्यश्रीजी के गुणगणों का वर्णन किया गया है और तपागच्छ के नायक बतलाये गये हैं । ओस-वंशीय कुंरा नाथीपुत्र थे । बालवय में दीक्षा ग्रहण की थी । निर्मल चारित्र का पालन करते हुए गौतम, सुधर्म, जम्बू के समान उज्ज्वल कीर्ति वाले युगप्रधान हीरविजयसूरि भक्तों के संकट दूर करते हैं और शिव-सुख सम्पत्ति के दायक हैं एवं इसके साथ ही साधुओं के गुणगणों का वर्णन करते हुए उनको सागर सम गम्भीर, अन्तरङ्ग वैरियों से दूर, शोक सन्ताप, रोग-शोक से दूर, भव्यों का मनोवाञ्छित पूर्ण करने वाले बतलाया गया है और जङ्गम तीर्थ की उपमा दी गई है ।

प्रस्तुत है हीरविजयसूरि स्वाध्याय :

पणमिय पास जिणिन्द देव मनवंछितकारी ।
समरिय सरसती देवी माय मुझ मति दिउ सारी ॥
हीरविजय सूरिन्दराय तपसंयमधारी ।
थुणस्युं तपगच्छ तणउ राय लहुवय ब्रह्मचारी ॥१॥
सयल साधु सिर शेखरुए समता रस भण्डार ।
विनयकरि ..... अन्ते पामइ भव पार ॥२॥
गाम नगर पुर देसि देसि भविअण पडिबोहइं ।
निरुपम समकित सार बीज जाणी आरोहिइं ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमीअ समाणि विशाल वाणि कविजन मन मोहिइं ।
निर्मल बुद्धि तणुं निवास सुर गुरु जिम सोहइ ॥३॥
सोमगुणे करी दीपतु ए जाणे पूनिम चंद ।
तपतेजइ दीपइ सदा भासुर जेम दिणिंद ॥४॥
नवनिधान ..... (?) वाडि रूडि परिपालइं ।
चउदह विद्या रयणरासि परि इहि सम्भालइ ॥
विविध देश ऊपना भव्य समझावी लावइ ॥५॥
दूषमकालि अवतरिउ ए धर्मचक्रवर्ति एह ।
सुन्दर गणधर पदधरु मुझ मनि नहीं संदेह ॥६॥
गोअम सोहम जम्बु पमुह पूरव रिषि तोलइ ।
तुम्ह कीरती ऊजलि देखी कुमतीइ सवि डोलइ ॥
सयल राय तुम्ह नमइं सुरपति गुण बोलइ
सायरसम गम्भीर चित्त परदोस न खोलइ ॥७॥
रूप अनोपम तुम तणुं ए जोतां हरख अपार ।
युगप्रधान सोहाकरु जय जय जगदाधार ॥८॥
जो तुं आणा धरइ सोवि संसार न झूरइ ।
क्रोधादिक जे अन्तरङ्ग वैरी सवि मूरइ ॥
रोग शोक संताप ताप भविअणना चूरइ ।
जो तुम्ह सेवा करइं तास मनवंछित पूरइ ॥९॥
शिव सुख सम्पद दायकू ए दर्शन तोरु सामि ।
अलिअ विघन दूरइ टलइ मुनिवर ताहरइ नामि ॥१०॥
ओसवंश शृङ्गारहार कुंरा सुत सुणिइ ।
माता नाथी ऊयरि हंस सुरतरू सम गणीइ ॥
थावर तीरथ सिद्धक्षेत्र जङ्गम ए भणीइ ।
पूज्य तुम्हारा गुण अनेक मइ किणि परि थुणीइ ॥११॥
कुशलवर्द्धन पण्डित गुरुए पभणए तेहनु सीस ।
हीरविजयसूरीसरू प्रतिपउ कोडिवरीस ॥१२॥

इति श्री हीरविजयसूरीश्वर स्वाध्याय सम्पूर्णः

C/o. १३ ए, मेन गुरुनानक पथ, मालवीयनगर, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org